International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 9 Issue 1, January 2019,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

राजस्थान के मूर्तिशिल्प में लकुलीश का अंकन

–डॉ महेन्द्र चौधरी
सह –आचार्य
इतिहास विभाग
आर. एल. सहरिया राजकीय
महाविद्यालय, कालाडेरा (जयपुर)

भारतीय संस्कृति, हिन्दू समाज और पुराणों में शिव का महत्व अद्वितीय है। वे काल के देवता है, त्रिलोचन है। ब्रह्मा सृजन करते है, विष्णु पालन करते है और शिव संहार करते है यद्यपि शैव पुराणों में संहार के साथ ही सृष्टि की रचना और पालन कार्यों से भी शिव को सम्बद्ध किया गया है। यषोधर्मन–विष्णुवर्मन के मन्दसौर अभिलेख में शिव को भवसृज अर्थात् सृष्टि की रचना करने वाला कहा गया है।[1] शैव पूजा का प्रारम्भिक प्रतीक लिंग था, जो कालान्तर में उपनिषद् के रुद्र या ईषान के प्रतीकों में अन्तर्हित होकर रुद्र–शिव का प्रतीक बन गया।[2] श्वेताश्वतर उपनिषद् में कहा गया है –

''यो योनिं योनिमधितिष्ठत्येको यस्मिन्निदं स च वि चैति सर्वम्।
तमीशानं वरदं देवमीड्यम् निचाय्येमां शान्तिमत्यन्तमेति।।''[3]

लकुलीश शिव के चौबीसवें अवतार थे।[4] जो पाशुपत शैव धर्म के संस्थापक थे। रत्नचन्द्र अग्रवाल ने लकुलीश की गणना शिव के 18 अवतारों में की है,[5] वहीं मारूतिनंदन तिवारी व कमलगिरी ने शैव धर्म की पाशुपत शाखा के प्रवर्तक लकुलीश को शिव का 28वां अवतार बताया है।[6] भण्डारकर ने अभिलेखो के आधार पर लकुलीश के आविर्भाव की तिथि तथा स्थान दूसरी शताब्दी ईस्वी में बड़ौदा के धबोई जिले के कायावरोहण में (आधुनिक कारवण) निश्चित किया है।[7]

प्राचीन काल में पाशुपत (शैव) सम्प्रदायों में लकुलीश सम्प्रदाय बहुत प्रसिद्ध था। लकुलीश मूर्तियों का निर्माण गुप्तकाल में प्रारम्भ हुआ। मध्यकाल में लकुलीश की स्वतंत्र मूर्तियाँ मुख्यतः पश्चिमी और पूर्वी भारत में प्रचुर संख्या में बनीं। इस स्वरूप के कुछ प्रमुख उदाहरण भुवनेश्वर, एलिफैण्टा, एलोरा, पट्टडकल (विरूपाक्ष मन्दिर), बादामी, अयहोल, ग्वालियर (तेली का मन्दिर), हिंगलाजगढ़ जैसे स्थलों से प्राप्त हुए हैं। लकुलीश की मध्यकालीन चतुर्भुज मूर्तियों में दो हाथ सामान्यतः धर्मचक्रप्रवर्तन मुद्रा में तथा शेष दो

हाथ अक्षमाला और त्रिशूल से युक्त है। उनका विशिष्ट आयुध लकुट उनके दाहिने पार्श्व में देखा जा सकता है। लकुलीश को पद्मपीठ पर पद्मासन में विराजमान दिखाया गया है। लकुलीश मूर्तियों में शिव सामान्यतः ऊर्ध्वलिंग है।[8] लकुलीश की मूर्ति के सिर पर जैन मूर्तियों के समान केश होते है जिससे लोग उसको जैन मूर्ति मान लेते है परन्तु वह जैन मूर्ति नहीं वरन् शिवावतार की मूर्ति हैं विश्वकर्मावतार – वास्तुशास्त्रम के अनुसार वह प्रायः द्विभुजी होती है–

न(ल) कुलीशं ऊर्ध्वमेढ्र पद्मासन सुसंस्थितं।
दक्षिणे मातुलिंग च वामे दण्ड प्रकीर्तितम्।

बाये हाथ में लकुट (दण्ड) रहता है जिसके कारण लकुलीश या लकुटीश नाम पड़ा। दाहिने हाथ में बिजोरा नामक फल होता है जो शिव की त्रिमूर्तियों के मध्य में दो हाथों में से एक में पाया जाता है। मूर्ति पदमासनस्थ होती है और किसी में नीचे नंदी या कहीं दोनों ओर एक जटाधारी साधु भी बना रहता है जिसका चिह्न (ऊर्ध्व लिंग) मूर्ति पर स्पष्ट होता है। यद्यपि कुछ चतुर्भुज प्रतिमाएं भी प्राप्त हुई है।[9]

लकुलीश अंकन का प्रथम उदाहरण हमें सातवीं शताब्दी ईस्वी के झालरापाटन (झालावाड़) के चन्द्रभागा स्थान पर स्थित शीतलेश्वर महादेव मन्दिर से प्राप्त होता है, जहाँ मन्दिर के ललाट बिम्ब पर लकुलीश का अंकन किया गया है। इस आधार पर यह कहा जा सकता है कि लकुलीश पूजा सातवीं शताब्दी ईस्वी से प्रारम्भ हुई।[10] डग झालावाड़ से प्राप्त प्रतिमा जो कि वर्तमान में झालावाड़ संग्रहालय में है। इस प्रतिमा में लकुलीश पद्मासनस्थ एवं ऊर्ध्वमेढ्र है। वामाधःकर में बिजोरा नामक फल, दक्षिणाधःकर में सर्प वेष्टित दण्ड, वाम ऊर्ध्वकर में पुस्तक एवं दक्षिण ऊर्ध्वकर में कमल है। लकुलीश के गले में माला, नीचे लटकता हुआ यज्ञोपवीत, हाथों में कंगन, लम्बे काल तथा सिर पर जैन तीर्थंकरों के समान केशादि का तक्षण पर्याप्त सुन्दरता से किया गया है। कोटा संग्रहालय में रखी प्रतिमा पद्मासनास्थ है। इसमें ऊर्ध्वमेढ्र चतुर्बाहु देवता के दक्षिण के दोनों कर खण्डित है तथा वाम ऊर्ध्व कर में पुस्तक एवं वामाधःकर घुटने पर रखा है। लकुलीश के केश विन्यास तीर्थंकरों की भांति है। बाड़ोली के मन्दिरों के अहाते में एक बृहत् पाषाण स्तम्भ के मध्यवर्ती भाग में गन्धर्व किन्नरों से घिरे हुए चतुर्भुज, पद्मासनस्थ

एवं ऊर्ध्वमेढ्र लकुलीश का अंकन मिलता है। यहाँ आधुयों का क्रम में वामाधःकर में पुस्तक, वाम ऊर्ध्व कर में सम्भवतः सर्प वेष्टित दण्ड, दक्षिण ऊर्ध्व कर में माला एवं दक्षिणाधः कर में बिजोरा फल है। इस प्रतिमा के सिर पर जटाजूट उत्कीर्ण है। बाड़ोली के मन्दिर के अहाते के अन्दर एक चबूतरे पर एक आयताकार शिला पर ब्रह्मा, शिव तथा विष्णु का अंकन अति भव्य है। यहाँ प्रत्येक देवता को चतुर्भुज प्रदर्शित किया गया है, फलक के मध्य में स्थित शिव का लकुलीश रूप प्रस्तुत किया गया है। लकुलीश के सिर पर तीर्थंकरों के समान केश विन्यास, पद्मासन एवं ऊर्ध्वमेढ्र स्थिति, गले में माला, शरीर पर यज्ञोपवीत इत्यादि। वामाधःकर में बिजोरा फल, वाम ऊर्ध्व कर में पुस्तक, दक्षिणाधः कर में दण्ड एवं दक्षिण ऊर्ध्व कर में सर्प, जो नीचे के कर में विद्यमान दण्ड के ऊपर लिपट गया है।[11]

उदयपुर के पास नागदा के प्रख्यात सहस्त्रबाहु देवालयों (11वीं शताब्दी ई.) के गर्भगृहों के बाहर प्रधान ताकों में चतुर्बाहु एवं आसनस्थ शिव की छाती पर श्रीवत्स चिह्न बना हुआ है, यद्यपि सिर पर जटा स्पष्ट है और ऊर्ध्वमेढ्र प्रभाव अदृष्य है। 'आहाड़' (आघाटपुर–उदयपुर से 2 मील दूर) के गंगोद्भेद कुण्ड के पास 10–11 वीं शती के जीर्णशीर्ण लघुदेवालय की पिछली प्रधान ताक में विद्यमान चतुर्बाहु एवं जटाधारी शिव प्रतिमा के विषय में यही स्थिति है। मेवाड़ की मध्यकालीन गुहिल कलान्तर्गत शिव प्रतिमा में श्रीवत्स चिह्न की अभिव्यक्ति स्पष्ट ही है।[12]

अजमेर संग्रहालय की एक लकुलीश प्रतिमा में घुंघराले बालों वाले एवं ऊर्ध्वरेतस् लकुलीश की छाती पर भी श्रीवत्स चिह्न उल्लेखनीय है। अथूर्णा (बांसवाड़ा) की मध्यकालीन प्रतिमाओं के ऊर्ध्वमेढ्र लकुलीश की चरण चौकी पर वृषभ चिह्न मिलता है। राजस्थान की मध्यकालीन शैव प्रतिमाओं में श्रीवत्स लांछन की अभिव्यक्ति विशेष महत्व रखती है।[13]

किराडू मंदिर समूह के सोमेश्वर मंदिर के सभा मंडप के स्तम्भ से प्राप्त लकुलीश प्रतिमा में शिव द्विबाहु है तथा दोनों का अग्र भाग खण्डित हो चुका है। शिव पद्मासन मुद्रा में विराजमान है। शिव के बाल घुंघराले है कानों में कुण्डल, गले में हार, वनमाला, भुजबंध व यज्ञोपवीत धारण कर रखा है तथा उनकी छाती पर श्रीवत्स लांछन बना हुआ

है। प्रतिमा में त्रिनेत्र एवं ऊर्ध्व लिंग सुस्पष्ट है। लकुलीश प्रतिमा के दोनों ओर परिचारिकाओं को उत्कीर्ण किया गया है जो कि आंशिक रूप से खण्डित अवस्था में है।

किराड़ू से लगभग 40 किलोमीटर दूर चौहटन नामक स्थान पर एक मध्यकालीन शिव प्रतिमा तो और भी महत्वपूर्ण है क्योंकि यहां पर चतुर्बाहु एवं जटाधारी शिव के नीचे के दोनों हाथ बद्धाजंलि मुद्रा में है, ऊपर के हाथों में अक्षसूत्र व कमल सुस्पष्ट है, नीचे दोनों ओर अनुचर उत्कीर्ण हैं और ध्यानस्थ शिव की जटाजूट एवं छाती पर श्रीवत्स चिह्न भी स्पष्ट है।[14]

राजस्थान में लकुलीश पूजा के प्रमुख केन्द्र एकलिंग (उदयपुर), बाडोली (कोटा) तथा चन्द्रभागा (झालरापाटन) थे, परन्तु पश्चिमी राजस्थान के अन्य भागों में भी लकुलीश की मूर्तियाँ प्राप्त हुई है। आठवीं शताब्दी ईस्वी तक लकुलीश प्रतिमाओं में श्रीवत्स चिह्न एवं घुंघराले बालों की अभिव्यक्ति स्पष्ट नहीं है। अतः यह आभास मिलता है कि सम्भवतः 9 वीं शती तथा तदुपरान्त ही इन अभिप्रायों को मूर्तिकला में अंकित किया गया था।[15] नागदा से प्राप्त प्रतिमा योगीश्वर स्वरूप के लकुलीश स्वरूप में पूर्ण रूप से परिवर्तित होने का संक्रमण काल था।[16] नाना, चौहटन तथा माउण्ट आबू के मन्दिरों के गर्भगृह के प्रवेशद्वारों से लकुलीश मूर्तियाँ प्राप्त होती है। नाना के वि.स. 1290 (ई.स. 1233) तथा चौहटन के वि.स. 1365 (ई.स. 1308) के अभिलेख इंगित करते है कि तेरहवीं शताब्दी में इस क्षेत्र में लकुलीश पूजा अत्यन्त लोकप्रिय थी।[17]

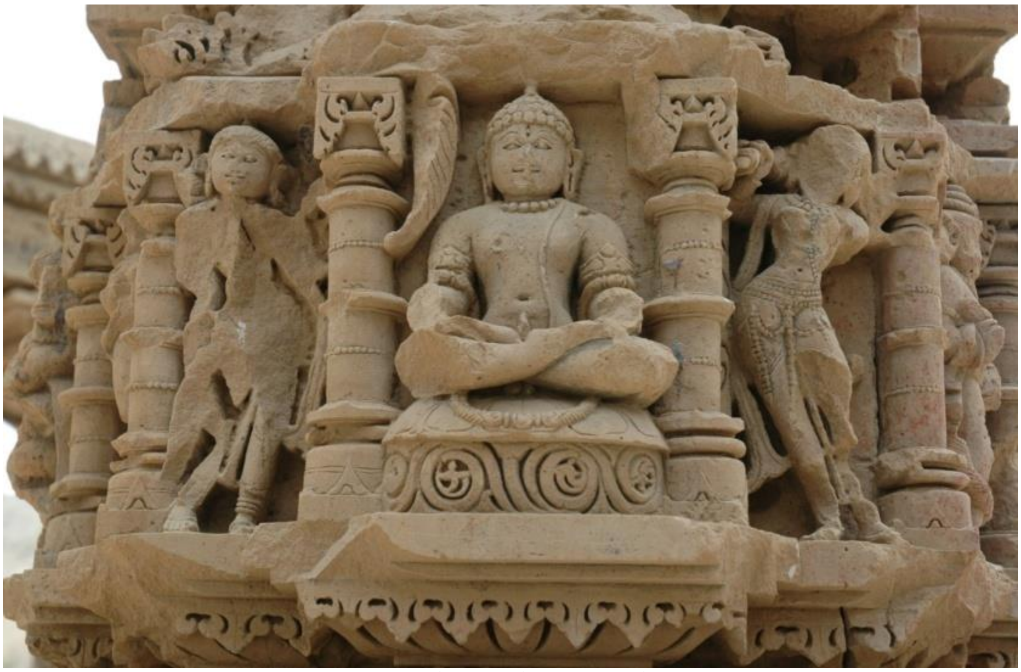

लकुलीश प्रतिमा, किराड़ू मन्दिर

सन्दर्भ–

---

[1] जे. एन. बनर्जी, दि डवलपमेंट ऑफ हिन्दू आइकोनोग्राफी, तृतीय संस्करण, नई दिल्ली, 1974, पृष्ठ संख्या 512–513.

[2] भण्डारकर, वैष्णविज्म शैविज्म एण्ड अदर माइनर रिलीजियस सैक्ट्स, स्ट्रासबर्ग, 1913, पुनर्मुद्रित वाराणसी, 1965, पृष्ठ संख्या 110.

[3] श्वेताश्वतर उपनिषद्, आनन्दाश्रम मुद्रणालय, पूना, 1966, IV, श्लोक 11.

[4] वायुपुराण, वेंकटेश्वर स्टीम प्रेस, बम्बई, 1933, अध्याय 23, श्लोक 217.225.

[5] रत्नचन्द्र अग्रवाल, राजस्थान की प्राचीन मूर्तिकला के क्षेत्र में चतुर्भुजी लकुलीश की कुछ अप्रकाशित कलाकृतियां, शोध पत्रिका, उदयपुर, पौष और चैत्र, वि. स. 2012.13, भाग–7, अंक 2.3, पृष्ठ संख्या 6.

[6] मारूतिनंदन तिवारी एवं कमल गिरी, मध्यकालीन भारतीय प्रतिमा लक्षण, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, 1997, पृष्ठ संख्या 27.

[7] भण्डारकर, आर्कियोलोजीकल सर्वे ऑफ इण्डिया, एनुअल रिपोर्ट, 1906–07, पृष्ठ संख्या 179–190.

[8] मारूतिनंदन तिवारी एवं कमल गिरी, मध्यकालीन भारतीय प्रतिमा लक्षण, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, 1997, पृष्ठ संख्या 27–28.

[9] रत्नचन्द्र अग्रवाल, राजस्थान की प्राचीन मूर्तिकला के क्षेत्र में चतुर्भुजी लकुलीश की कुछ अप्रकाशित कलाकृतियां, शोध पत्रिका, उदयपुर, पौष और चैत्र, वि. स. 2012.13, भाग–7, अंक 2. 3, पृष्ठ संख्या 6.

[10] भण्डारकर, ए एकलिंगजी स्टोन इन्सक्रिप्सन एण्ड द ओरिजन एण्ड द हिस्ट्री ऑफ द लकुलीश सेक्ट, द जर्नल ऑफ बोम्बे ब्रांच ऑफ द रॉयल एशियाटिक सोसाइटी, अंक XXII, पृष्ठ संख्या 158.

---

[11] रत्नचन्द्र अग्रवाल, राजस्थान की प्राचीन मूर्तिकला के क्षेत्र में चतुर्भुजी लकुलीश की कुछ अप्रकाशित कलाकृतियां, शोध पत्रिका, उदयपुर, पौष और चैत्र, वि. स. 2012–13, भाग–7, अंक 2–3, पृष्ठ संख्या 8–9.

[12] रत्नचन्द्र अग्रवाल, राजस्थान की मूर्तिकला में शिव लकुलीश एवं श्रीवत्स लांछन, वरदा, बिसाऊ, अप्रेल 1964, वर्ष 7, अंक 2. पृष्ठ संख्या 2.

[13] वही।

[14] वही।

[15] वही।

[16] नीलिमा वशिष्ठ, इंसकल्पचरल ट्रेडिशन ऑफ राजस्थान, पब्लिकेशन स्कीम, जयपुर, 1989, पृष्ठ संख्या 121.

[17] वही।